मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता। दुनिया के मजदूरो, एक हो!

# फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है। दुनिया को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा।

RN 42233

नई सीरीज नम्बर 14 | अगस्त 1989 | 50 पैसे

## मजदूर और देश

[कुछ पाठकों ने पूछा है कि हम अखबार के शीर्ष के एक कोने में "मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता" क्यों छापते हैं। प्रस्तुत लेख इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या के दृष्टिकोण से कुछ विचार पेश कर रहा है।]

देश क्या है? कैसे बने देश? मजदूर और देश का क्या रिश्ता है? ऐसे सवाल ही बहुत से लोगों को अजीब लग सकते हैं। पर दुनिया-भर में आज राष्ट्र अथवा देश एक बुनियादी चीज के तौर पर हैं। सब देशों को मिलाकर ही आज की पूँजीवादी विश्व व्यवस्था गठित है। और देशहित को आज दुनिया के हर हिस्से में पवित्र गाय के तौर पर पेश किया जाता है, इस पर उँगली उठाना बीते काल की ब्रह्म हत्या के समान है। मानव इतिहास के हजारों वर्षों के दौर में धर्म की आड़ में लाखों लोगों के कत्ल हुये हैं पर देशहित की आड़ में तो पिछले सौ साल में ही आठ-दस करोड़ लोगों का कत्ल हुआ है। दासों और अर्ध-दासों के मुक्ति संघर्ष के लिए जैसे धर्म की पोल खोलना बहुत महत्व का था, उसी प्रकार आज मजदूरों के मुक्ति संघर्ष के लिए देशहित की पोल खोलने का महत्व है।

एक बात शुरू में ही साफ कर दें। पाँच-सात हजार साल से मानव समाज लुटेरों, कमेरों और बीच के तबकों में बँटा हुआ है। रोटी-कपड़ा-मकान-सुरक्षा हासिल करने के ढंग अब तक के सामाजिक ढाँचों को तय करते रहे हैं। और रोटी-कपड़ा-मकान-सुरक्षा प्राप्त करने के तरीकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। इन बदलावों के आधार पर स्वामी और दास, सामन्त और अर्ध-दास, व्यापारी और किसान-दस्तकार, पूँजी के नुमाइन्दे और मजदूर वाले परिवर्तन हुए हैं। और अभी हम बँटे हुये समाज में ही हैं। ऐसे समाज में लुटेरे अपने दमन-शोषण को आड़ देने के लिए पवित्र गऊओं को खड़ा करते हैं। शिक्षा-दीक्षा-प्रचार-प्रवचन-संस्कार द्वारा वे ऐसा ताना-बाना बुनते हैं कि शोषितों-पीड़ितों में लुटेरों की पवित्र गायों के लिये पूजा-अर्चना का भाव उभरे। मेहनतकशों की आँखों पर पट्टी बाँध कर, पवित्र अफीम की घुट्टी पिलाकर उनकी चमड़ी उतारना लुटेरों के लिए आसान हो जाता है।

आइये अब देश को देखें। आज के राष्ट्रों अथवा देशों की उमर तीन-चार सौ साल से ज्यादा नहीं है। सामन्ती युग में छोटे-छोटे रजवाड़ों और बड़े-बड़े साम्राज्यों का घालमेल था। उपभोग के लिए उत्पादन वाली सामन्ती व्यवस्था में जब बिक्री के लिए उत्पादन, यानि माल का प्रोडक्शन काफी बढ़ने लगा तब माल की आवश्यकताओं ने नये राजनीतिक साँचों की माँग की। मिलती-जुलती भाषा, संस्कृति और लगते इलाके के आधार पर राजनीतिक साँचे, यानि राष्ट्रीय राज्य का गठन मंडी के लिए प्रोडक्शन की जरूरत के मुताबिक था। इसलिए बढ़ते माल उत्पादन के साथ राष्ट्रीय राज्यों के गठन की माँग उठी। सामन्ती व्यवस्था के छोटे-छोटे रजवाड़ों और बड़े-बड़े साम्राज्यों के जोड़-तोड़ का सिलसिला चला और राष्ट्रों का उदय हुआ। ऐतिहासिक कारणों व घटना-क्रम की जटिलता की वजह से एक-राष्ट्रीय के साथ ही बहुराष्ट्रीय देश भी बने। इस प्रकार माल उत्पादन के अनुरूप देश के रूप में राजनीतिक इकाइयों का गठन हुआ।

अतः देश माल उत्पादन की आवश्यकता की उपज है। और सामाजिक विकास के जिन नियमों ने माल उत्पादन का दबदबा कायम किया, वे नियम ही आज बिक्री के लिए उत्पादन की मौत की घंटी बजा रहे हैं। आज समय मंडी के लिये उत्पादन के स्थान पर मनुष्य की आवश्यकता के अनुसार प्रोडक्शन की माँग कर रहा है। ऐसे में, बिक्री के लिए प्रोडक्शन से जिनके हित जुड़े हैं, वे लोग देश-रूपी अपने राजनीतिक ढाँचों को बचाने के लिये कमर कसे हैं। पूँजीवादी व्यवस्था के गहराते संकट का बोझ वे लोग मजदूरों के कन्धों पर डाल रहे हैं। मजदूरों के विरोध को पूँजी के नुमाइन्दे देशहित के खिलाफ घोषित करते हैं और मजदूरों को कुचलने के लिए माहौल बनाते हैं। इस प्रकार पुलिस-फौज, जेल-कचहरी वाले डंडे के साथ-साथ पूँजी के नुमाइन्दों ने "देश-हित सर्वोपरि" की पवित्र अफीम अपनी रक्षा के लिए उगाई है। दूसरी तरफ, मनुष्य की जरूरत के लिये प्रोडक्शन के समर्थकों ने माल उत्पादन और उसके देश-रूपी राजनीतिक तन्त्र को अपने हमले का निशाना बनाया है। देशभक्ति की पूँजीवादी अफीम के खिलाफ 1848 में ही "कम्युनिस्ट घोषणापत्र" ने आवाज बुलन्द की, "मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता। दुनिया के मजदूरो, एक हो!"

यूँ कम्युनिस्ट-लेबल लगाये आज राज्य-पूँजीवाद की समर्थक धारायें भी हैं जो देश की एकता, अखंडता और विकास के पुराने पूँजीवादी कचरे को बेसुरे राग में अलाप रही हैं। इनके बुरे नतीजे रूस-चीन की घटनाओं में देखे जा सकते हैं।

प्रोडक्शन की शक्तियाँ आज इतनी डेवालेप हो गई हैं कि मानव हित में उनका इस्तेमाल देशों के आधार पर नहीं हो सकता। देशों को तोड़कर, विश्व साम्यवादी व्यवस्था कायम करके ही प्रोडक्शन की शक्तियों का आज हम अपने भले के लिये इस्तेमाल कर सकते हैं। माल उत्पादन के सर्वोच्च रूप, पूँजी-वादी माल उत्पादन से विशेष रूप से जुड़े और उससे पीड़ित-शोषित मजदूरों की मुक्ति माल उत्पादन को खत्म करने में ही है। और यह माल उत्पादन के राजनीतिक साँचे, देश को खत्म किये बिना नहीं हो सकता। इसलिए मजदूर और देश का रिश्ता जानी दुश्मनी का रिश्ता है। देश पूँजीवादी खोल है जिसे काटकर ही मजदूर वर्ग मुक्ति की राह पर बढ़ सकता है और सम्पूर्ण मानव-जाति के हित का दरवाजा खोल सकता है।

इसीलिये अपने अखबार को हम मार्क्स और एंगेल्स के शब्दों, "मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता" से शुरू करते हैं।

## दुनिया में मजदूरों के संघर्ष

### रूस में हड़ताल

12 जुलाई को साइबेरिया के एक छोटे से शहर में वेतन और वर्किंग कंडीशनों में सुधार की आम माँगों के लिये कोयला खान मजदूरों ने एक लोकल हड़ताल शुरू की। जंगल की आग की तरह यह हड़ताल रूसी साम्राज्य के इस कोने से उस कोने तक की कोयला खानों में फैल गई। पाँच लाख कोयला खान मजदूर हड़ताल में शामिल हो गये, पूरा रूसी तन्त्र हिल गया।

गोर्बाचोफ ने 19 जुलाई को रूसी महासंसद में कहा कि साइबेरिया क्षेत्र की एक हफ्ते पुरानी हड़ताल से ही दस लाख टन कोयले का नुकसान हुआ है। रूसी राष्ट्रपति ने कहा कि कोयला खान मजदूरों की हड़ताल से पेरेस्त्रोइका और ग्लासनोस्त के नाम वाला उसका आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सुधारों का कार्यक्रम भी उलट सकता है।

रूसी पूँजी के भयभीत सर्वेसर्वा ने मजदूरों से हड़ताल खत्म करने की भावुक अपीलें की। तीन दिन में तीन बार गोर्बाचोफ ने अपीलें की, और आश्वासन दिये कि मजदूरों की माँगें मान ली जायेंगी।

रात पाली के लिये 40 प्रतिशत वेतन बढ़ाने की घोषणा और वर्किंग कंडीशन सुधारने के आश्वासन के बाद साइबेरिया के कुजबास क्षेत्र के एक लाख हड़ताली मजदूरों ने 19 जुलाई की रात से काम शुरू कर दिया। पूर्वी यूक्रेन में डोनबास स्थित रूसी साम्राज्य के सबसे बड़े कोयला खदान क्षेत्र के मजदूरों ने 24 जुलाई को हड़ताल खत्म की। रेडियो मास्को ने 25 जुलाई को समाचार दिया कि उत्तरी ध्रुव क्षेत्र के कोयला खान मजदूर हड़ताल जारी रखे थे।

कुछ समय से रूसी साम्राज्य में धर्म, भाषा, नस्ल और इलाके के नाम पर हो रहे दंगे-फसाद में सैकड़ों लोगों के मारे जाने की बुरी खबरों के बाद मजदूरों की इस बड़ी हड़ताल का शुभ समाचार आया है। आइये मामले को थोड़ा कुरेद कर देखें।

पूँजीवादी व्यवस्था के गहराते संकट की वजह से 1914 में लड़ाई छिड़ी जिसमें ढाई करोड़ लोग मारे गये। 1914 में ही द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय नाम वाला दुनिया-भर के मजदूरों का क्रान्तिकारी संगठन खुलेआम पूँजीवादी झोलियों में चला गया। इन सबके बावजूद 1917 में पूँजीवाद के खिलाफ मजदूर वर्ग की क्रान्तिकारी लहर उठी। इस लहर ने रूस, हंगरी, जर्मनी में सम्राटों के मुकुटों को धूल चटाई। रूस में यह क्रान्तिकारी लहर अधिकतम ऊँचाई पर पहुँची और वहाँ अक्तूबर 1917 में मजदूर वर्ग ने सत्ता पर कब्जा कर लिया। पर अन्य स्थानों पर मजदूर वर्ग सत्ता दखल करने में असफल रहा और क्रान्ति-कारी उफान में ठहराव-सा आ गया। और क्रान्ति की रक्षा के लिये रूस में आम मजदूरों के हथियारबन्द रहने की बजाय फौज बनाने जैसे कुछ ऐसे कदम उठाये गये थे कि वहाँ क्रान्ति के गर्भ से ही प्रतिक्रान्ति उभरी। राज्य पूँजीवाद के रूप में पूँजीवाद रूस में फिर स्थापित हुआ।

चूँकि क्रान्ति के गर्भ से प्रतिक्रान्ति उभरी थी, उसने मजदूरों का राज, समाजवाद, कम्युनिज्म जैसे शब्दों का इस्तेमाल जारी रखा और मजदूरों के दमन-शोषण के लिये एक विशाल पुलिस-फौज के तन्त्र का गठन किया। क्रान्ति के बाद प्रतिक्रान्ति से भौचक्के रूसी मजदूर पिछले 60-70 साल में बेहद क्रूरता से दबाये-कुचले गये हैं। दुनिया के बाकी इलाकों में इस दौरान मजदूर या तो रूसी-मार्का राज्यपूँजीवादी धाराओं के शिकार बने हैं या फिर अमरीकी-मॉडल की समर्थक धाराओं द्वारा रूस में दमन-अत्याचार के भंडाफोड़ से उलझन में रहे हैं।

1929 की महामन्दी और 1939 में छिड़ी महा मार-काट में मजदूर भ्रम और धोखों के शिकार रहे। पर यह सब कब तक चल सकता है? सामाजिक विकास के नियमों की वजह से संकट पूँजीवादी व्यवस्था का है। राज्य पूँजीवादी रूप इससे बच नहीं सकते। इसलिये पिछले 30-35 साल में हंगेरी, चेकोस्लोवाकिया,

सम्पर्क—मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन० आई० टी० फरीदाबाद—121001

पोलैंड में राज्य-पूँजीवाद के खिलाफ मजदूरों ने बगावतें कीं। फौज की मदद से उन्हें कुचल दिया गया पर इससे राज्य पूँजीवाद द्वारा ओढ़ी समाजवाद की चादर तार-तार होने लगी। मजदूर वर्ग के सचेत क्रान्तिकारी आन्दोलन के लिये दुनिया-भर में जमीन तैयार होने लगी। और आज हम लाल झन्डे के उभार की, मजदूरों के खून से रंगे लाल झण्डे के नये उभार की ओर बढ़ रहे हैं। दुनिया-भर में पूँजी के नुमाइन्दे इस नये उभार को रोकने की जोड़-तोड़ में लगे हैं।

रूसी खुफिया पुलिस का प्रमुख रह चुका गोर्बाचौफ खतरे को अच्छी तरह भाँप रहा है। इसीलिये पूँजी के इस सरगने ने अपने भाई-बन्धों के विरोध के बावजूद खुलेपन और सुधार के दलदली कार्यक्रम शुरू किये ताकि अमरीका व भारत की तरह ही धर्म-जाति-नस्ल-भाषा-इलाके के झगड़ों और गाँजा-अफीम चरस के झमेलों में रूसी मजदूर उलझ जायें। गोर्बाचौफ अपने मिशन में सफल होता लग रहा था कि कोयला खान मजदूरों की हड़ताल के रूप में रूसी मजदूरों की पहली अँगड़ाई ने ही गोर्बाचौफ के दलदल को चुटकी में पाटने की मजदूरों की क्षमता प्रदर्शित कर दी है।

आने वाले दिन मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी उभार के दिन हैं। अपने मार्क्सवादी हथियार को और पैना करने का यही समय है—आओ मिलकर काम करें।

## हिन्दुस्तान वायर्स में तालाबन्दी

मैनेजमेंट में धड़ेबन्दी का होना फरीदाबाद की कई फैक्ट्रियों में साफ-साफ नजर आ रहा है। कई जगह मैनेजमेंट के धड़ों ने यूनियनों में भी अपने-अपने धड़े बना रखे हैं। मैनेजमेंट के धड़ों में जब उलट-पुलट होती है तब यूनियन में उठा-पटक में लीडरशिप चेंज होती है या पुरानी की जगह नई यूनियन का आना भी अब फरीदाबाद की फैक्ट्रियों में आम बात हो गई है। गेडोर टूल्स में कुछ साल पहले मैनेजमेंट के धड़ों के मुताबिक यूनियन के सत्ताधारी और अपोजीशन लीडर थे। थॉमसन प्रेस में जब जनरल मैनेजर की छुट्टी की गई तब उसके साथ ही यूनियन लीडर को भी दफा किया गया और नई यूनियन को लाया गया। बाटा में चल रही मैनेजरों की फेर-बदल से उनसे जुड़े लीडर आजकल खूब परेशान हैं।

वास्तव में बात यह है कि आज किसी गैर-सरकारी फैक्ट्री के भी जो कर्ता-धर्ता बने हुये हैं, उनका बहुत ही कम पैसा उस फैक्ट्री में लगा होता है। बैंकों, बीमा, फुटकर शेयर होल्डरों आदि का पैसा ही आजकल ज्यादातर फैक्ट्रियों में लगा है। मैनेजमेंटें इस निराकार पूँजी की नुमाइन्दा होती हैं। मैनेजमेंटों का काम है, मजदूरों के खून-पसीने को निचोड़कर पूँजी को बढ़ाना। और इस काम के बदले में उन्हें कोठी-कार-नौकर-चाकर-सैर-सपाटे की चमक-दमक वाला जीवन मिलता है।

लेकिन आज हालत यह हो गई है कि किसी फैक्ट्री में लगी पूँजी बढ़ या न बढ़े, मैनेजमेंट में बैठे लोग अपनी शान-शौकत में कमी नहीं आने देते। सरकारी फैक्ट्री में तो खैर साहब लोगों का कोई पैसा नहीं लगा होता, पर चूंकि गैर-सरकारी फैक्ट्री में भी मैनेजमेंट के लोगों का बहुत ही कम पैसा लगा होता है, इसलिये फैक्ट्री बन्द हो जाये तो इन लोगों को भी कोई खास फर्क नहीं पड़ता। जब लगता है कि फैक्ट्री चलेगी नहीं, तब मैनेजमेंट में बैठे लोग आमतौर पर खुली लूट-पाट करते हैं। पैसा डूबता है बैंकों-बीमा आदि का तथा नौकरी के साथ-साथ कई बार मजदूरों की सर्विस का पैसा भी मारा जाता है।

इसलिये भी आजकल जब फैक्ट्री धकाधक चलती है तब बेरोक-टोक हेरा-फेरी करने और फैक्ट्री जब बन्द होने को होती है तब लूट-पाट पर उँगली न उठने देने के लिए मैनेजमेंटें मनमाफिक यूनियन लीडरों को रखती हैं। मजदूरों को कन्ट्रोल में रखने और हेरा-फेरी पर परदा डाले रखने में सहायता करने वाले लीडरों को मैनेजमेंटें रुपये-पैसे के साथ-साथ और भी सुविधायें देती हैं। बात यहाँ तक पहुँच जाती है कि कम्पनी को चूना लगाने के लिये अफसर और यूनियन लीडर मिलकर काम करते हैं।

यह थोड़ा-बहुत समझने के बाद ही हिन्दुस्तान वायर्स या अन्य कई फैक्ट्रियों की घटनाओं को समझा जा सकता है।

कई साल से हिन्दुस्तान वायर्स में एटक की यूनियन है। यहाँ काम कर रहे दो हजार मजदूरों में 364 मजदूर ही परमानेन्ट हैं, बाकी सब कैजुअल व ठेकेदारों के वर्कर हैं। सरकारी कानूनों के मुताबिक जो बनता है, वह भी मजदूरों को वर्षों से नहीं मिल रहा। 24 सैक्टर की इस बड़ी फैक्ट्री में लोकल मैनेजमेंट, लेबर डिपार्टमेंट के अधिकारी और एटक लीडर खागड़ों की तरह चरते रहे हैं और मजदूरों का कचूमर निकालते रहे हैं। 542 की जगह जब 625 न्यूनतम वेतन वाला कानून आया तब इन साँडों ने अति ही कर दी। इस पर हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूरों ने कुछ न कुछ करने की ठान ली।

मैनेजमेंट-यूनियन गठजोड़ से टक्कर लेने के लिये जैसे कि आमतौर पर होता है, हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूर शासक पार्टी के टोले, देवीलाल की एल एम एस के पास पहुँचे। इतनी बड़ी मछली को जाल में आई देखकर लूट मार संगठन आपे में नहीं रह सका। देवीलाल के राजनीतिक नफे-नुकसान की परवाह न कर, 13 जून को देवीलाल को लाल पगड़ी बाँधने वाले एटक-सीटू-एच एम एस लीडरों की चिल्ल-पों की चिन्ता छोड़, लूट मार संगठन के नेता भरी तिजोरी की तरफ लपके। उन्होंने हिन्दुस्तान वायर्स के गेट पर हरा झन्डा गाड़ दिया और लगे मजदूरों को गरम करने।

मैनेजमेंट के सहयोग से एटक लीडर ने लाठी के जोर पर कब्जा जमाये रखने की कोशिश की। एटक लीडर ने हिन्दुस्तान वायर्स के कुछ वर्करों को फैक्ट्री गेट पर वास्तव में पिटवाया पर लट्ठमार लूट मार संगठन पर इसका कुछ असर नहीं पड़ा।

और लोकल मैनेजमेंट में हावी गुट के खिलाफ जो गुट है उसने ऊपर आने के लिये जोर मारा। लगता है कि कलकत्ता हैड आफिस के कान में उसने खुसर-पुसर की। 18 जुलाई को मैनेजमेंट-एल एम एस समझौते का ऐलान हो गया। लगता है कि लोकल मैनेजमेंट में हावी गुट ने इसमें टंगड़ी मारी है—मजदूरों द्वारा एटक के झंडे को उतारकर फाड़ देने का हवाला देकर 18 जुलाई को ही रात को फैक्ट्री में तालाबन्दी कर दी।

मैनेजमेंट में गुटों के झगड़ों और लूट-पाट में हिस्सा-पत्ती के लिये ट्रेड यूनियनी दुकानदारों के झगड़ों में मजदूरों को नहीं उलझना चाहिये। लूट मार संगठन में हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूर अगर विश्वास रखेंगे तो वे अपनी लुटिया ही डुबोयेंगे। मजदूरों को अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि यह सरकार उनकी सरकार नहीं है। पहले कदम के तौर पर हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूर तालाबन्दी के खिलाफ हर रोज सुबह फैक्ट्री गेट पर इकट्ठे होकर डी सी आफिस तक जलूस निकालें। अगर वे यह कदम उठायेंगे तो एल एम एस व इस सरकार की असलियत उनके सामने आ जायेगी और साथ ही साथ हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूरों की ताकत भी बढ़ेगी। हर रोज जलूस वाला यह पहला कदम उठाकर ही हिन्दुस्तान वायर्स के मजदूर 15 दिन में अपने हित में और कदम उठाने लायक बन जायेंगे।

## केल्विनेटर में फिर गच्चा

चुनावों में पुराने लीडरों को हरा कर, साइड मीटिंगों में बढ-चढ़ कर हिस्सा लेकर और 29 जून को सफल हड़ताल करके इस बार केल्विनेटर के मजदूरों ने संघर्ष करने की अपनी इच्छा प्रकट कर दी थी। नये लीडरों ने काफी-कुछ पर पानी फेर दिया, फिर भी, मजदूरों के जुझारूपन को देखते हुये मैनेजमेंट ने कुछ दे कर चटपट तीन-साला एग्रीमेन्ट कर ली है।

29 जून की हड़ताल के बाद अपनी ताकत बढाने के लिये केल्विनेटर के मजदूरों ने कोई पहलकदमी नहीं की। और, गेट मीटिंग में नये लीडरों ने एक-दूसरे पर खुले-आम आरोप लगा कर मजदूरों में निराशा फैलाई। ऐसे हालात में मजदूर पक्ष की मजबूती के लिये आम सभा की मीटिंग करके मामले तय करना जरूरी होता है। पर केल्विनेटर के मजदूरों ने यह कदम भी नहीं उठाया। इस पर आरोपों-इल्जामों और खुसर-पुसर का आम माहौल बना। और केल्वि-नेटर के आम मजदूर इस सब को ऐसे देखते रहे जैसे मामला किसी दूसरे का हो।

कहाँ संघर्ष का बनता माहौल और कहाँ यह दलदल। वास्तव में नाजुक पोजीशन में फँसी मैनेजमेंट के लिये यह मुँह माँगी मुराद थी। अपने मन माफिक एग्रीमेंट करने में मैनेजमेंट सफल हुई।

तोड़ दी नये लीडरों ने अपनी कसमें। बरकरार रखीं हैं मैनेजमेंट ने तीन-साला एग्रीमेन्ट में मजदूरों में फूट डालने वाली तीन कैटेगरियाँ। और आगे ही वर्क लोड से दबे जा रहे केल्विनेटर मजदूरों पर नई एग्रीमेंट ने और वर्क लोड लाद दिया है। अब मजदूरों को हर रोज 1700 की जगह 2300 रेफ्री-जिरेटर और 2000 कम्प्रेसर की जगह 2500 कम्प्रेसर बनाने होंगे।

मैनेजमेंट का इस एग्रीमेंट पर खुश होना स्वाभाविक है। और वास्तव में मैनेजमेंट इतनी खुश हुई है कि चीफ वर्क्स एग्जिक्यूटिव ने अपनी स्वयं की तरफ से 2+1 रुपये बढाने की घोषणा की है।

मजदूरों का इस एग्रीमेंट पर गुस्सा होना स्वाभाविक है। लेकिन "इन लीडरों को भी हटायेंगे" वाली बात काफी नहीं है। हमें मामले की थोड़ी गहराई में जाना चाहिये ताकि केल्विनेटर के मजदूरों के साथ-साथ अन्य फैक्ट्रियों के मजदूर भी इस ठोकर से सीख सकें और आने वाले दिनों में बेहतर ढँग से लड़ सकें।

जब मजदूर मौजूदा लीडरों से ज्यादा खार खा जाते हैं तब उनकी कोशिश होती है कि उन्हें बदलें। लेकिन पुरानों की जगह नये लीडरों को लाने पर भी मजदूरों को वही ढाक के तीन पात मिलते हैं। जगह-जगह और बार-बार दोहराये जा रहे इस सिलसिले से पार कैसे पायें ? इसके लिये हमें एक तो यह इसके लिये हमें एक तो यह समझना होगा कि मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है। कोई और यह काम कर दे वाली आस को छोड़ना होगा। कोई मसीहा आयेगा या पैदा होगा और हमें मुक्त कर देगा वाले भ्रमजाल को काटना जरूरी है। समस्याओं से निपटने के लिये आवश्यक कार्य में आम मजदूरों द्वारा हर कदम पर आगे बढ़ कर हिस्सा लेना जरूरी है। किनारे खड़े होकर गुमसुम रहना बिल्ली को देखकर कबूतर द्वारा आँख मूँद लेने जैसा है—यह मजदूरों की बरबादी की राह है। दूसरी बात यह समझानी जरूरी है कि दुनिया को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा। जाति-धर्म-भाषा-इलाके और अन्धविश्वास-अज्ञान की विरासत में मिली जंजीरों को तोड़ना तो जरूरी है ही, परमानेन्ट-कैजुअल-ठेकेदार के वर्कर-इस या उस फैक्ट्री के मजदूर के भेद वाली नई जंजीरों को भी तोड़ना होगा। इतिहास द्वारा क्रान्तिकारी बनाया मजदूर वर्ग क्रान्तिकारी चेतना से लैस होकर ही अपनी जिम्मेदारी निभा सकता है। तीसरी समझने वाली बात यह है कि फैक्ट्रियों के मालिकाने में आये परिवर्तन ने रोजमर्रा के सवालों पर भी संगठन और संघर्ष के नये तरीके मजदूरों के लिये जरूरी बना दिये हैं। एक फैक्ट्री में छिड़े संघर्ष में अन्य फैक्ट्रियों के मजदूरों के शामिल होने और संघर्ष की धार तीखी करने के लिये पूँजीवादी तन्त्र के रेल और सड़क जैसे महत्वपूर्ण अंगों को जाम करके ही आज मजदूरों के संघर्ष अपनी पोजीशन मजबूत कर सकते हैं।

**"मुझे नहीं मालुम। इतना जान कर करना भी क्या है। यह लीडरों का काम है, वे जानें।"+"फलानों (जाति या भाषा या इलाके वालों) को रोकना है। जैसा भी हो, यह है तो अपना।"+"हमारी फैक्ट्री का मामला है। उन्हें इससे क्या मतलब ? या, उस फैक्ट्री के वर्करों का झगड़ा है। हमें उससे क्या लेना-देना है ?"—अपने अन्दर फैली ऐसी जहरीली जड़ों को काटने के लिये आओ मिल कर कोशिश करें।**

स्वत्वाधिकार व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित वअशोक कम्पोजिंग एजेन्सी द्वारा, मानस प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली-31 में मुद्रित।